भांग की खेती : इतिहास, अवसर व चुनौतियां

हिमाचल की अगर बात की जाये तो यहाँ भांग प्राचीन काल से प्रचलन में रही है वह चाहे फिर नशे के लिए उपयोग हो या अन्य रूप में प्रदेश के अधिकतर ग्रामीण परिवेश में भांग के बीज को भून कर गेहूं की मोड़ी के साथ खाने में प्रयोग किया जाता रहा है। मोड़ी व मुड़ा हिमाचल के लोगों में गेहूं, चावल को लोहे के विशेष बर्तन में भून कर तैयार किया जाता है।

हिमाचल प्रदेश सरकार ांग की खेती को कानूनी दर्जा ने पर विचार करने जा रही है। ल में सपन्न विधानसभा सत्र ं दौरान प्रदेश के मुख्यमंत्री भांग को कानूनी दर्जा देने ी बात की, इस बावत पांच धायकों की एक समिति का ठन किया गया, जो भांग की खेती से ंबंधित रिपोर्ट एक महीने के भीतर पेगी, जिसके बाद भांग की खेती की धता के बारे विचार किया किया ाएगा। यह बात सुनने में अवश्य ही ाजीबो-गरीब प्रतीत होती है। भांग की ेती को सरकारी नियंत्रण में पैदा किया जाए तो यह निश्चित ही प्रदेश ी आर्थिकी को सकारात्मक रूप से भावित करने में सहायक सिद्ध होगी।

भांग की खेती के लाभ और सका दवा के रूप में इस्तेमाल के लते सरकार इसे कानूनी दर्जा देने के ाए नीति बनाने पर विचार करने जा ही है। भांग का वैज्ञानिक नाम 'कैनाविस साटाइवा'' है तथा यह कैनाबेसी'' परिवार से सम्बन्ध रखने ाला एक पौधा है। पूरे विश्व में ुख्यतः भांग की दो प्रजातियाँ पायी ाती है जिसमे एक ''कैनाविस डिका'' है व दूसरी को ''कैनाविस ाटाइवा'' के नाम से जाना जाता है। ांग की इन दोनों प्रजातियों में से 'कैनाविस इंडिका'' कम मात्रा में व कैनाविस साटाइव'' अत्यधिक मात्रा ं पायी जाती है। भांग एक लम्बे अरसे ं समाज के विभिन्न चिंतकों के लिए ोध का विषय रहा है, इसके ामाजिक, आर्थिक व चिकित्स्य रूप ं शोध विश्व के कोने-कोने में ाद्यमान व प्रचलित है।

भांग के बारे में उपलब्ध विभिन्न ोधकर्ताओं के अनुसार आज से गभग दस हजार साल पूर्व भी भांग ा प्रचलन था। जर्मनी के शोधकर्ता गवेन लॉन्ग इसको पाषाणकालीन ेती मानते है परन्तु तब इसका प्रयोग नशे के लिए नही अपितु रेशों व सीमित मात्रा में पोषण भोज्य अवयवों के रूप में किया जाता था, जैसे-जैसे समय बीतता चला गया लोग इसको नशे के लिए प्रयोग करने लगे, जो वर्तमान में एक समस्या के रूप में हम सभी के समक्ष खड़ी है। हिमाचल तो दूर पूरे भारतवर्ष में इस तरह का कोई भी उद्योग अभी तक स्थापित नही हुआ है। इतना जरुर है कि चुनिन्दा आयुर्वेदिक कामें सियों में भांग के बीज व इसके अन्य रूपों का इस्तेमाल होता आया है।

हिमाचल की अगर बात की जाये तो यहाँ भांग प्राचीन काल से प्रचलन में रही है वह चाहे फिर नशे के लिए उपयोग हो या अन्य रूप में प्रदेश के अधिकतर ग्रामीण परिवेश में भांग के बीज को भून कर गेहूं की मोड़ी के साथ खाने में प्रयोग किया जाता रहा है। मोड़ी व मुड़ा हिमाचल के लोगों में गेहूं, चावल को लोहे के विशेष बर्तन में भून कर तैयार किया जाता है।

मोड़ी प्रदेश के पहाड़ी जिलों में अत्यधिक प्रचलन में रही है, व भांग के बीज का प्रयोग भी उसमे भून कर किया जाता है। वही भांग के डंठलों को सूखाकर उसमे से निकलने वाले रेशों से घरेलू उपयोग में लाये जाने वाली रस्सी भी तैयार होती है, जो धीरे-धीरे प्रचलन से बाहर होती जा रही है। प्रदेश में कुल्लू जिले में भांग की नशे के रूप में सबसे ज्यादा खेती की जाती है। परन्तु अगर भांग की कानूनी तौर पर खेती की बात करे तो वो वर्तमान में प्रदेश में हो रही गैर-वैधानिक खेती से बिल्कुल पृथक है। पूरे विश्व में दवा उद्योग में जो भांग प्रयोग की जाती है उसमे नशे की मात्रा जिसे विज्ञान की भाषा में टेट्राहाइड्रो कैनिबिनाल (टीएचसी) कहते है 0.30 प्रतिशत पाई जाती है। जबकि अभी हिमाचल प्रदेश में जो भांग उगाई जाती है उसमे न्यूनतम टीएचसी 30 फीसदी है जो प्रदेश की टोपोग्राफी के अनुसार 70 फीसदी तक जाती है। प्रदेश में प्रचलित भांग का यह रूप परिवर्तनशील नही है, जाहिर है यह भांग वो नहीं हो सकती जिसकी खेती को वैधानिक मान्यता की बात प्रदेश सरकार कर रही है, जिस भांग की खेती की बात की जा रही है उसको ''औद्योगिक भांग'' शब्द का प्रयोग किया जाता है। अगर हम ऐसा समझ रहे है कि हाथ से मलकर जो भांग की गठियां तैयार करके उनको सरकार को बेचकर पैसे प्राप्त करेंगे तो यह निश्चित रूप से अज्ञानता व हास्यप्रद होगा। ''औद्योगिक भांग'' को नियंत्रित वातावरण व एक सीमित मात्रा में ही उत्पादित किया जाता है। इसकी खेती की अगर बात की जाए तो इसको गेहूं व मक्की की तरह नही बीजा जा सकेगा। भांग की खेती को लेकर हमारे पड़ोसी राज्य उत्तराखंड में अनेकों प्रयास किये जा रहे है। यह प्रयास सरकारी होने के साथ-साथ व्यक्तिगत भी है।

डॉ. सतपाल

अतः पूरे विश्व की भांग की खेती की बात करे तो इसके अवश्य ही सकारात्मक परिणाम रहे है। देश-विदेश में हो रहे औद्योगिक भांग की खेती से प्रतीत होता है कि भांग के बेशुमार प्रयोग है, यह निर्भर करता है कि हम उसका प्रयोग किस तरह से कर रहे है। इन सब बातों को अपने मन-मस्तिष्क से विचारने के पश्चात यह कहना उपयुक्त होगा की प्रदेश में औद्योगिक खेती की सही मायनों में वैधानिक मंजूरी समय की मांग है, यदि सही तरीकों से इसका प्रयोग किया जाएगा तो वह दिन दूर नही जब यह प्रदेश के एक बड़ी जनसंख्या के लिए रोजगार का एक साधन बन कर उभरेगी साथ ही साथ प्रदेश की बिगड़ती आर्थिकी के बोझ को कम करने में संजीवनी बूटी का कार्य करेगी, जिसके लिए इस ओर सतत प्रयास व सही दिशा में अग्रसर होने की जरुरत है।

अतः यह उम्मीद की जा सकती है कि निकट भविष्य में भांग की औद्योगिक कृषि वर्तमान कृषि का एक अभिन्न अंग होगा, परन्तु इसके लिए सर्वप्रथम जनता जनार्दन की भांग की खेती के प्रति कुंठित वह संकीर्ण सोच बदलने की आवश्यकता है

Scanned with ACE Scanner

खेलों से युवा ऊर्जा का सही उपयोग

खेलों का मानव जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है, इससे मनुष्य का सर्वांगीण विकास होता है, यह सार्वभौमिक सत्य है। खेलों से व्यक्ति का शारीरिक व मानसिक विकास होने के साथ-साथ नेतृत्व क्षमता आपसी सामंजस्य व सहयोग सहित टीम भावना जैसे महत्त्वपूर्ण गुणों का विकास भी होता है, जो व्यक्ति के अपने जीवन के अलावा आगे चलकर समाज के बेहतर विकास के लिए वरदान प्रतीत होते हैं। इसी बात को ध्यान में रखते हुए खेलों में विशेष वरीयता प्राप्त खिलाड़ियों को सरकारी नौकरी में समाज के बेहतरी के उद्देश्य से विशेष रूप से स्थान आरक्षित होते हैं। हिमाचल को गौरवान्वित करने वाले कबड्डी खिलाड़ी अजय ठाकुर व भारतीय महिला क्रिकेट टीम की खिलाड़ी सुषमा वर्मा को प्रदेश पुलिस में 'उप-पुलिस अधीक्षक' जैसे प्रतिष्ठित पद पर नियुक्ति देना इस बात की पुष्टि करता है। प्रदेश के वर्तमान में सैंकड़ों खिलाड़ी ऐसे हैं जिन्होंने प्रदेश को विभिन्न स्तर पर ख्याति दिलाई है परिणामस्वरूप उन्हें उचित सम्मान भी मिला है और प्रदेश सरकार के अंतर्गत विभिन्न विभागों में वर्षों से अपनी सेवायें दे रहे हैं व बखूबी अपनी जिम्मेवारियों का निर्वहन भी कर रहे हैं। वहीं दूसरी ओर शायद कुछ खिलाड़ी कारणवश अपना हक पाने से वंचित रह गये हैं, यह भी सत्य है, फिर भी ये खिलाड़ी किसी न किसी रूप में समाज की बेहतरी के लिए कार्य कर रहे हैं।

हिमाचल प्रदेश में प्राथमिक स्तर से उच्च स्तर तक खेलों की अपनी एक निश्चित सारणी है जिसकी इन संस्थानों द्वारा बखूबी पालना की जाती है। प्राथमिक स्तर में पहले स्कूल स्तर पर बच्चों को खेल खिलाये जाते हैं, तत्पश्चात ब्लाक स्तर पर, जिला स्तर पर, राज्य स्तर पर अंततः जूनियर नेशनल स्तर तक जाने का मौका मिलता है, जिससे एक नन्हे खिलाड़ी के अंदर उसके बाल्यकाल में ही खेल के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण पैदा होता है। ठीक इसी प्रकार माध्यमिक व उच्च स्तर पर भी खेलों का ऐसा ही मसौदा है जिसका अनुसरण किया जाता है। स्कूल स्तर पर खेलों को बढ़ावा देने के लिए व बच्चों की खेलों के प्रति रुचि को बढ़ाने के लिए किये जाने वाले ये प्रयास महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे है। माध्यमिक व उच्च स्तर पर इस कमी को दूर करने के लिए प्रदेश में शारीरिक शिक्षकों को तैनात किया गया है।

अगर महाविद्यालयों की बात की जाए तो शारीरिक शिक्षा व खेल हालांकि पूरक ही समझे जाते रहे हैं, परन्तु विगत कुछ वर्षों से खेल को शारीरिक शिक्षा से अलग करने का प्रयास किया गया है। प्रदेश के महाविद्यालयों में अंतर-महाविद्यालय खेल-कूद प्रतियोगिता का आयोजन हर वर्ष लगभग राष्ट्रीय खेलों में शामिल खेलों की तर्ज पर किया जाता है। अतः इन खेलों का प्रदेश विश्वविद्यालय द्वारा एक निश्चित शेड्यूल सम्बंधित सभी महाविद्यालयों को भेजा जाता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए प्रदेश विश्वविद्यालय द्वारा एक महीने के समय के लिए प्रत्येक महाविद्यालयों को सम्बंधित खेल के प्रशिक्षक तैनात करने का प्रावधान है, जो उस विशेष खेल से सम्बंधित जानकारी व बारीकियां खिलाड़ियों से सांझा करते हैं। अंततः हर खेल में अच्छे खिलाड़ियों का चयन किया जाता है जो की प्रदेश विश्वविद्यालय की टीम का हिस्सा होते हैं और अंतर-विश्वविद्यालय प्रतियोगिता में भाग लेते हैं। जो गत वर्षों में युवाओं को अपना सपना सार्थक करने में एक बहुत नायाब कदम साबित हुआ है।

प्रदेश के वर्तमान में सैंकड़ों खिलाड़ी ऐसे हैं जिन्होंने प्रदेश को विभिन्न स्तर पर ख्याति दिलाई है परिणामस्वरूप उन्हें उचित सम्मान भी मिला है और प्रदेश सरकार के अंतर्गत विभिन्न विभागों में वर्षों से अपनी सेवायें दे रहे हैं व बखूबी अपनी जिम्मेवारियों का निर्वहन भी कर रहे हैं। वहीं दूसरी ओर शायद कुछ खिलाड़ी किसी कारणवश अपना हक पाने से वंचित रह गए हैं, यह भी सत्य है, फिर भी ये खिलाड़ी किसी न किसी रूप में समाज की बेहतरी के लिए कार्य कर रहे हैं।

डॉ. सतपाल

आज जहां प्रदेश विकास के नवीन आयाम स्थापित कर रहा है वहीं युवा वर्ग का नशे की गिरफ्त में आना कहीं न कहीं गहन चिन्ता का सबब है। अब समय आ गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को नशाखोरी की बढ़ती समस्या के लिए अपने-अपने स्तर पर प्रयास करने की जरुरत है। जिसके लिए प्रदेश के खेल से जुड़े लोग समय-समय पर अपने गांव, पंचायत व खंड स्तर पर 'नशा छोड़ो, खेल खेलों', 'नशे से नाता तोड़ो खेल से रिश्ता जोड़ों' व 'नशा-निषेध खेल मेला' इत्यादि शीर्षकों खेलों का आयोजन भी कर रहे, जिसका मकसद लोगों को व खासकर स्कूली बच्चों को खेलों से जोड़ना है। खास कर उन बच्चों को जो विद्यालय में खेल से जुड़ने में असमर्थ रहे है उनको जोड़ना मुख्य उद्देश्य है। इस तरह के आयोजन प्रदेश के कोने-कोने तक पहुंचाने की जरुरत है ताकि खाली समय में बच्चे नशे के प्रति ध्यान न लगाकर खेलों में ध्यान दे, जिससे उनका शारीरिक व मानसिक विकास हो सके।

Scanned with ACE Scanner

हिमाचल प्रदेश पूरे भारतवर्ष में सेब के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है। इसलिए हिमाचल को 'फलों का राज्य' कहा जाता है। प्रदेश की विविध जलवायु, भौगोलिक क्षेत्र तथा उसकी स्थिति में भिन्नता समशीतोष्ण तथा उष्ण कटिबंधीय फलों की खेती के लिए बहुत उपयुक्त है। यह क्षेत्र अन्य गौण उद्यान उत्पादन जैसे फूल, खुम्ब शहद तथा हॉप्स की खेती के लिए भी बहुत उपयुक्त है। प्रदेश की इस अनुकूल स्थिति के परिणामस्वरूप पिछले कुछ दशकों में भूमि उपयोग अब कृषि से फलोत्पदन की ओर स्थानान्तरित होता जा रहा है।

वर्ष 1950-51 में अगर बात की जाए तो फलों के अधीन कुल क्षेत्र 792हेक्टेयर था, जिसमे कुल उत्पादन 1,200 टन था, जो वर्ष 2021-22 में 2,35,785हेक्टेयर क्षेत्र हो गया तथा फलों का कुल उत्पादन 9.29 लाख टन हो गया है। जो इस बात की पुष्टि करता है कि कृषि से पलायन फलोत्पादन की तरफ हो रहा है। इसके पीछे एक विशेष कारण भी है। जब कृषि की बात की जाए तो हिमाचल जैसे पहाड़ी प्रदेश के लिए कृषि करना उतना आसान नहीं है क्योंकि मुख्यतः कृषि करने के लिए समतल भूमि का होना आवश्यक है।

जबकि फलों के उत्पादन के लिए चाहे जैसी भी भूमि हो फलों के पेड़ उगा मिल रहा है। हिमाचल प्रदेश में फलोत्पादन में सेब का प्रमुख स्थान है जिसके अंतर्गत फलों के अधीन कुल क्षेत्र का लगभग 49 प्रतिशत भाग है तथा उत्पादन कुल फलों के उत्पादन में सेबों का 81 प्रतिशत हिस्सा है, जो अपने आप में एक बड़ी संख्या है। वर्ष 1950-51 में सेबों के अंतर्गत 400 हेक्टेयर क्षेत्र था जो की वर्ष 2021-22में 1,15,016 हेक्टेयर हो गया। 2007-08 और 2021-22

के बीच सेब के तहत क्षेत्र में 21.4 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई। जिससे इस बात की पुष्टि होती है कि सेब उत्पादन प्रदेश की अर्थव्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण अंग बनकर सामने आया है। सेब के अतिरिक्त निम्बू, फूल-उत्पादन, आम व लीची उत्पादन में भी प्रदेश के बागवान धीरे-धीरे हाथ आजमाने की कोशिश करते नजर आ

तलाश हुआ है। अगर बात की जाए शिमला, कुल्लू व किन्नौर जिला की तो सेब उत्पादन होने से इन जिलों की प्रति-व्यक्ति आय में जहां वृद्धि हुई है, साथ ही साथ जीवन स्तर में भी काफी सुधार देखने को मिलता है। परन्तु सेब विकास की यह दर इन कुछ जिलों तक ही सिमित हुई है। आज के समय में सेब की विभिन्न प्रजातियां है जो चाहे जैसे भी वातावरण में अपने आपको अनुकूलित कर लेती है और किसी भी जिले की आर्थिकी को सुधारने में सहायक सिद्ध हो सकती है। जिसके लिए व्यक्तिगत प्रयास भी किये जा रहे है। बिलासपुर जैसी जलवायु में भी सेब की उत्पादकता हो रही है, जिसको बड़े स्तर पर करने की जरूरत है। प्रदेश के अति दुर्गम क्षेत्र चंबा मे भी सेब के लिए उपयुक्त जलवायु एवं वातावरण है परन्तु वहां तक सेब की उन्नत किस्मे अभी

सबसे पहले प्राकृतिक समस्याओं जैसे सुखा, ओलावृष्टि व अतिवृष्टि इत्यादि। जिससे निपटने के लिए बागबानो ने एंटी हेल नेट तथा एंटी हेल गन जैसी विदेशी तकनीकों का फायदा लिया है, परन्तु जिसको हम प्रकृति के नियम के साथ खिलवाड़ के रूप में मान सकते है। जिसको हम मानव विकसित समस्या के रूप में देखते है।

दूसरी बड़ी समस्या की अगर बात की जाए तो वह दिन-प्रति-दिन बढ़ते जा रहे रसायनों के प्रयोग से है। विकास की गति को तीव्र करने के लिए रसायनों का अन्धाधुन्ध प्रयोग किया जा रहा है, जिससे हमारे सवास्थ्य पर बूरा प्रभाव पड़ना स्वाभाविक सी बात है। आज के समय में अगर हम देखे तो प्रदेश में दिल का दौरा, कैंसर एवं श्वास से सम्बंधित बीमारियों के मरीजों की संख्या दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। जिसके लिए हम स्वयं जिम्मेवार है। अतः हमें इस ओर भी विशेष ध्यान देने की जरूरत है।

प्रदेश में सेब ने आर्थिकी सुधारने में एक अहम् भूमिका निभाई है, परन्तु हमें आर्थिकी के साथ-साथ सामाजिक परिदृश्य को भी ध्यान में रखने की आवशयकता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है, यह सर्वविधित सत्य है। अतः अपनी आर्थिक स्तिथि को सुधारने के साथ-साथ हमारे कन्धों पर अपने समाज व पर्यावरण को बचाने की

Scanned with ACE Scanner

तिब्बत-बुशहर के व्यावसायिक संबंधों का प्रतीक 'लवी'

हिमाचल प्रदेश की राजधानी शिमला से लगभग 130 किलोमीटर दूर सतलुज दरिया किनारे बसा कस्बा रामपुर बुशहर, बुशहर रियासत का सबसे प्रमुख एवं महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसकी सीमाएं अन्तरराष्ट्रीय बॉर्डर तिब्बत से लगने के कारण यह व्यापारिक, राजनीतिक व रणनीतिक दृष्टि से भारतवर्ष के महत्त्वपूर्ण कस्बों में गिना जाता है, जिसके चलते यह लम्बे समय से रणनीतिकारों के समक्ष चर्चा का विषय एवं आकर्षण का केंद्र बना रहा है।

यह मध्य सहस्राब्दी से तिब्बत के साथ व्यापारिक संबन्धों के लिए भी विख्यात रहा है, हालांकि पिछले कुछ समय से तिब्बत के साथ सीधे तौर पर व्यापार समाप्त होने के बावजूद आज भी यहां व्यापारिक गहमा-गहमी देखने को मिलती है। इसकी घरेलू सीमाएं जिला किन्नौर व कुल्लू से लगने के कारण लोग आज भी इन जिलों के अलावा प्रदेश के अन्य भागों से खरीददारी करने रामपुर बुशहर के बाजार में आना पसंद करते हैं। यहां हर वर्ष नवम्बर महीने के दूसरे सप्ताह मुख्यतः दिनांक 11 से 14 तक राष्ट्रीय उच्च मार्ग के लगते हुए ऐतिहासिक पाट-बंगला मैदान में व्यापारिक मेला जिसे 'लवी' कहा जाता है, का आयोजन किया जाता है। लवी मेले की शुरुआत सन् 1681 से हुई मानी जाती है। इसका आरम्भ तिब्बत के तत्कालीन ल्हासा के [illegible] व बुशहर के राजा केहरी सिंह, जिन्हें औरंगजेब ने छत्रपति की उपाधि से नवाजा था, के बीच एक व्यापारिक समझौते व संधि के तहत हुई। समझौते के अंतर्गत दोनों ने यह तय कर ली थी कि इस व्यापारिक समझौते को अनिश्चित काल तक जारी रखेंगे, जिसके तहत रामपुर में लवी मेले का आगाज हुआ। हालांकि समय व परिस्थिति के चलते इसके मूल रूप में आमूल-चूल परिवर्तन हुए हैं, बावजूद इसके 342 वर्ष बीत जाने के बाद भी यहां के लोग व प्रशासन मध्य शताब्दी के [illegible] और राजा केहरी सिंह के मैत्रीय संधी की प्रतिज्ञा इस मेले के आयोजन से बखूबी निभा रहे हैं, ऐसा कहने में अतिशयोक्ति न होगी।

'लवी' शब्द का उद्भव 'लोई' शब्द से हुआ है, जिसका शाब्दिक अर्थ एवं अभिप्राय ऊन से बने हुए एक विशेष प्रकार के वस्त्र से है, जिसका प्रयोग मूलतः सोने के लिए, या ठण्ड में

पहनने के लिए किया जाता है। बुशहर रियासत में अधिकतर लोग भेड़ पालक थे। इसलिए ऊन प्रचुर मात्रा में विद्यमान होने के कारण ऊनी वस्त्रों का व्यापार होना स्वाभाविक सी बात है। आज भी इस रियासत के कुछ भागों में भेड़ पालन देखने को मिलता है, जिसमें वर्तमान का किन्नौर जिला जो बुशहर रियासत का हिस्सा था व रियासत का बारह-बीस का क्षेत्र आज भी भेड़ पालन में अग्रणी है।

यहां के कुछेक लोग आज भी भेड़ पालन का व्यस्त और कठिन जीवन गुजर-बसर करते हैं। इन लोगों के लिए लवी मेला उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना की पूर्व में हुआ करता था, क्योंकि लवी मेले के आयोजन के बाद ही भेड़ पालक ऊंचाई वाले क्षेत्रों से निचले क्षेत्रों की ओर भेड़ों के लिए चारे की तलाश में पलायन करना शुरू कर देते हैं। बुशहर के भेड़ पालकों के जीवन में लवी मेले व फाग मेले का मुख्य स्थान है जहां एक ओर लवी शरद ऋतु व फाग वसंत ऋतु के आगमन का बोध कराते हैं, वहीं फाग मेले के बाद भेड़ पालक पुनः अपने निवास की तरफ लौटना शुरू करते हैं।

'लवी' का यह मेला वैसे तो कई मायनों में महत्त्वपूर्ण है, किन्तु आज जहां एक ओर यह बुशहर-तिब्बत के व्यापारिक समझौते को दर्शाता है वहीं दूसरी ओर स्थानीय लोगों के लिए सर्दियों के आगमन का सन्देश भी देता है। नवम्बर महीने में बुशहर में सर्दी का मौसम शुरू हो जाता है अधिकतर इलाके बर्फ से ढक जाते हैं, इसलिए लोग दूर-दूर से आकर अपने साथ ऊनी वस्त्र के साथ खाने-पीने की आवश्यक सामग्री का भण्डार भी लेकर जाते हैं। लवी मेला प्राचीन समय में सट्टा-बट्टा (वस्तु विनिमय प्रणाली) अर्थव्यवस्था पर आधारित था, लोग ऊन व इससे निर्मित वस्त्रों के बदले में अपनी जरूरत की चीजें साथ ले जाते थे। बड़े-बुजुर्गों की मानें तो उनका मत है कि पूर्व में बुशहर व इसके आस पास के लोग लवी मेले के लिए अपने-अपने क्षेत्र की मुख्य व प्रसिद्ध वस्तुओं को विनिमय के लिए लेकर जाते थे, बदले में अपनी-अपनी आवश्यकता की वस्तुएं लेकर वापिस घर लौटते थे। लेकिन समय के साथ-साथ इसमें बदलाव होते गये जोकि वर्तमान मुद्रा प्रणाली में तब्दील हो गये। पूर्व में तिब्बत के अलावा यहां अफगानिस्तान के भी व्यापारी आते थे जिसके कारण इस मेले को वर्ष 1985 में अन्तरराष्ट्रीय स्तर के मेले का दर्जा भी दिया गया। इस मेले का एक और मुख्य आकर्षण अश्व प्रदर्शनी है जिसको वर्तमान में हिमाचल प्रदेश पशुपालन विभाग के सौजन्य से लवी मेले के शुभारम्भ से एक सप्ताह पहले ही पाट-बंगला के मैदान में ही आयोजित किया जाता है। यहां की प्रदर्शनी में स्पीति-घाटी में पलने वाला चमुर्थी घोड़ा मुख्य रूप से आकर्षण का केंद्र रहता है।

विभाग द्वारा अश्व पालन के प्रोत्साहन हेतु अश्व पालकों के लिए घुड़ दौड़ का आयोजन किया जाता है, जिसमे प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त घुड़सवारों एवं घुड़-धावकों को पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है। पूर्व में इस मेले में घोड़े केवल बेचे एवं खरीदे जाते थे, परन्तु पिछले कुछ वर्षों से पशुपालन विभाग के इस प्रकार की प्रदर्शनी के प्रयास निश्चित रूप से अश्व पालकों की आस एवं विश्वास के साथ उनके पालन में सहायक सिद्ध हुए हैं। वर्तमान में यहां की अश्व प्रदर्शनी इतनी प्रसिद्ध है कि हिमाचल के अलावा उत्तराखंड के गढ़वाल क्षेत्र से अश्व क्रेता आते हैं, और अपनी पसंद के घोड़े खरीद कर ले जाते हैं। अन्तरराष्ट्रीय लवी मेले की मशहूरी की एक अन्य वजह है यहां पर बेचे जाने वाले सूखे मेवे, जिसमें खुमानी, बादाम, दाख व चिलगोजा मुख्य रूप से देखने को मिलते हैं। यहां पर बिकने वाली सूखी खुमानी जो केवल और केवल किन्नौर में ही पायी जाती सही मायनों में खाने में जितनी स्वादिष्ट होती है उतनी ही स्वास्थ्यवर्द्धक भी। आज जब हम अपने आस-पास प्रदूषित वातावरण व पदार्थों पर रसायनों के बढ़ते उपयोग को देखते हैं तो जरूरत जैविक पदार्थों की महसूस होती है, ऐसे में खुमानी व चुली तेल की महत्ता और ज्यादा बढ़ जाती है, जो पूर्णतः जैविक है, शायद इसी के चलते लवी मेले में चुली के तेल की मांग सर्वाधिक देखने को मिलती है, जो निश्चित रूप से किन्नौर के लोगों को इसके उत्पादन के लिए प्रोत्साहित करता है। इतना ही नहीं बल्कि किन्नौरी चुली तेल को प्रदेश विज्ञान प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद् के द्वारा भौगोलिक सांकेतिक (जी.आई) पंजीकरण के तहत भी पंजीकृत किया गया है, जो अपने आप में गर्व की बात है। इसके अलावा फूल से सुसज्जित किन्नौरी टोपी, दोहड़ू, गुदमा (एक प्रकार का कम्बल) किन्नौरी शाल, मफलर सहित ऊन के पट्टू जिनको कोट व सदरी (आधी बाजू का कोट) बनाने के

डॉ. सतपाल

प्रयोग में लाया जाता है, जिसका व्यापार इस मेले में की खूबियों में सर्वोत्तम है। सूखे मेवे की खरीददारी के लिए लोगों को खासी भीड़ लवी के मैदान में सबसे ज्यादा देखने को मिलती है। सूखे मेवे किन्नौरी मार्किट में मिलते हैं, जो एक विशेष मार्किट होती है, जिसमे किन्नौर के लोग अपने-अपने उत्पाद को बेचते हुए नजर आते हैं। मक्की और कोदे की रोटी सरसों का साग मेले में पिछले कुछ वर्षों से लोगों की पहली पसंद बना हुआ है, जिसमे बिलासपुर एवं कुल्लू के व्यापारी अपनी सेवायें प्रदान करके खूब पैसा कमाते हैं। इसके अलावा तिब्बती लोग विशेष रूप से खाम्पा समुदाय से सम्बंधित, खूबसूरत जवाहरात-आभूषण व जड़ी-बूटियां बेचते हैं।

वर्तमान में ऊपरी किन्नौर का सेब भी इस मेले में बेचा जाता है, जो निश्चित रूप से किन्नौर के सेब उत्पादकों के लिए पिछले कुछ वर्षों से लाभदायी बाजार के रूप में उभरकर सामने आया है। पूर्व में जब लोग अपने-अपने घरों व गांव में कृषि से सम्बन्धित गतिविधियों में काफी मशगूल रहते थे, तो लोगों को एक दूसरे से मेल-जोल एवं मनोरंजन का यह मेला सबसे उपयुक्त साधन माना जाता था।

लोग जहां दिन में अपने उत्पादों को बेचते थे वहीं रात में नाटी व कायंग (किन्नौरी नृत्य) लगा कर झूमते नजर आते थे। वर्तमान में आधुनिकता के चलते इस मेले में काफी परिवर्तन देखे जा सकते हैं। स्थानीय विक्रेताओं के अलावा आज प्रदेश के पड़ोसी राज्यों से विक्रेता आ रहे हैं और खूब मुनाफा कमा कर ले जा रहे हैं, वहीं बेचे व खरीदे जाने वाले उत्पादों में भी भिन्नता देखने को मिल रही है। प्रशासन व मेला कमेटी द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम बड़े स्तर पर किये जा रहे हैं, जहां पर इस मंच के माध्यम राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय स्तर के कलाकार अपनी प्रतिभा का जादू बिखेरते नजर आते हैं, वहीं हिमाचल के उभरते कलाकारों को भी यह मंच उनके हौसलों को एक नई दिशा व दशा प्रदान करने का भी काम करता है।

मध्य सहस्राब्दी में मैत्री भाव से आरम्भ हुआ यह व्यापारिक मेला आज बहुआयामी गतिविधियों को अपने आप में संजोये रखे हुए है, जो निश्चित रूप से स्थानीय लोगों के लिए क्रेता व विक्रेता के रूप में लाभदायी है, साथ ही साथ हमारी संस्कृति व सभ्यता को पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाने में भी अहम् भूमिका निभा रहा है। लेकिन जिम्मेदारी हमारे साथ-साथ भावी पीढ़ी की इस समृद्ध सभ्यता व संस्कृति को संजोये रखकर पुश्तों तक पहुंचाने की है, तभी इसके मायने सार्थक होंगे।

'लवी' का यह मेला वैसे तो कई मायनों में महत्त्वपूर्ण है, जहां एक ओर यह बुशहर-तिब्बत के व्यापारिक समझौते को दर्शाता है वहीं दूसरी ओर स्थानीय लोगों के लिए सर्दियों के आगमन का सन्देश भी देता है।

Scanned with ACE Scanner

वर्तमान परिदृश्य में राष्ट्रीय युवा दिवस की प्रासंगिकता

भारतवर्ष के आध्यात्मिक वेला के इतिहास में स्वामी विवेकानंद का नाम अमर है व सदैव बड़े अदब से लिया जाता आया है और लिया जाता रहेगा। स्वामीजी विश्व के सम्मानित आध्यात्मिक नेताओं एवं गुरुओं में से एक थे। आध्यात्मिक गुरु के अलावा उन्हें साहित्यिक कार्यों व एक दार्शनिक, प्रखर वक्ता एवं एक महान देशभक्त के रूप में भी जाना जाता है। आज पूरा विश्व उनके जीवन, धर्म, साहित्य, दर्शन और आध्यात्मिकता के प्रति अनूठे दृष्टिकोण के लिए उन्हें याद करता है। उन्होंने जीवन के काफी छोटे समय में यूं कहें की बाल्यकाल व युवावस्था में ही शास्त्रों व धर्मग्रन्थों का अध्ययन किया व मात्र 30 वर्ष की आयु में सन 1893 में अमेरिका के शिकागो शहर में आयोजित विश्व धर्म-सम्मेलन में सनातन धर्म के दर्शन से पश्चिमी देशों को परिचित कराया। उन्होंने अपनी ओजस्वी वाणी में भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता, सभी धर्मों के प्रति आदर भाव तथा सनातन धर्म की विशेषताओं का व्याख्यान करते हुए पूरे विश्व के श्रोताओं को मंत्रमुग्ध किया। इनका जन्म सन् 1863 में जनवरी महीने की 12 तारीख को हुआ था, व मात्र 39 वर्ष की अल्पायु में 4 जुलाई, 1902 ई. को बेलूर मठ में ध्यान साधना करते हुए उन्होंने अपने प्राणों को त्याग दिया। इतने छोटे जीवनकाल में विश्वभर में अपनी अलग पहचान बनाकर आज युवाओं के लिए प्रेरणा के स्रोत बने स्वामी विवेकानंद को हर वर्ष 12 जनवरी को 'राष्ट्रीय युवा दिवस' के रूप में समर्पित किया गया है। वर्ष 1985 से प्रतिवर्ष 12 जनवरी को पूरे देश में 'राष्ट्रीय युवा दिवस' युवाओं को विवेकानंद के द्वारा बताये व अपनाए गए रास्तों से अवगत कराने के उद्देश्य से मुख्यतः विद्यालयों एवं महाविद्यालयों सहित देश के कोने-कोने में एक विशेष थीम को ध्यान में रखते हुए मनाया जाता है।

स्वामी विवेकानंद बाल्यकाल से ही प्रतिभाशाली थे। वे शिक्षा के साथ-साथ शास्त्रीय संगीत के भी शौकीन थे जिसका उन्होंने अपने विद्यालय काल में प्रशिक्षण भी लिया था। वे कला, साहित्य, इतिहास और धर्म जैसे विषयों में रुचि रखते थे। उनकी अध्यात्म व धर्म के प्रति रुचि बाल्यकाल से ही थी क्योंकि उनकी माता जी नियमित पूजा-पाठ व कथावाचन किया करती थी। इसी के चलते स्वामीजी का ईश्वर को जानने के लिए काफी उत्सुक रहते थे। 'क्या ईश्वर का कहीं अस्तित्व है ?' इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए वे अनेकों संतों व महात्माओं से मिले परन्तु कोई भी उनके इस प्रश्न का उत्तर व समाधान नहीं कर पाए।

लेकिन स्वामी राम कृष्ण परमहंस जी से पहली ही मुलाकात में विवेकानन्द काफी प्रभावित हुए व मीलों पैदल चलकर दक्षिणेश्वर पहुंचकर उन्होंने उनके समक्ष अपने मन-मस्तिष्क में हिंडोले लेता ईश्वर के अस्तित्व का प्रश्न किया, जहां उन्हें संतोषजनक उत्तर प्राप्त हुआ और वे स्वामी रामकृष्ण परमहंस के प्रिय शिष्य बन गये, वहीं अपने गुरु जी से विवेकानन्द नाम की संज्ञा भी प्राप्त की जबकि उनका बाल्यकाल का नाम नरेंद्रनाथ था, परन्तु वे स्वामी विवेकानंद के नाम से ही विश्वविख्यात हुए।

स्वामी विवेकानंद ने भगवद्गीता, उपनिषद व वेदों का गहन अध्ययन किया व उसको आत्मसात भी किया। युवाओं को लेकर स्वामीजी का मत है कि युवाओं को अधिक से अधिक संख्या में सामाजिक गतिविधियों में शामिल होना चाहिए, जो न केवल समाज की बेहतरी के लिए बल्कि व्यक्तिगत विकास के लिए भी मार्ग प्रशस्त करने में सहायक सिद्ध होता है। भारतीय संदर्भ में उन्होंने कहा है कि आध्यात्मिकता का मार्ग भौतिक और सामाजिक उन्नति के माध्यम से संभव है। समाज में प्रचलित ऊंच-नीच की भावना कभी भी उन्नति के मार्ग को प्रशस्त नहीं कर सकती है, अतः उन्होंने समाज में फैली हर प्रकार की कुरीतियों को जड़ से उखाड़ फैंकने के अपने जीवन काल में निरंतर प्रयत्न किये व ऐसा करने का आग्रह देश के युवाओं से भी अपने भिन्न-भिन्न भाषणों में करते रहे। युवाओं के लिए सन्देश के रूप में स्वामी जी ने कहा था कि 'उठो, जागो और तब तक चलते रहो जब तक लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाए' यह सन्देश आज भी लाखों युवाओं को अपने कर्तव्य व लक्ष्य प्राप्ति के लिए प्रेरित करता है। उनका मत था कि युवाओं को अपनी युवावस्था में अकेले रहना चाहिए, जो अकेला रहता है, उसका किसी से विरोध नहीं होता, और न ही वह किसी की शांति भंग करता है न दूसरा कोई उसकी शांति भंग कर सकता। अकेलापन प्रायः वैचारिक उन्माद पैदा करता है जिसका समाज के उत्थान के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए। युवाओं का जोश, जज्बात व जज्बा ही देश की उन्नति में सहायक सिद्ध हो सकता है, जिसको मूलतः सही दिशा देने की आवश्यकता होती है। विवेकानंद के अनुसार कि प्रत्येक काम उपहास, विरोध और स्वीकृति तीन अवस्थाओं से होकर गुजरता है। जो मनुष्य अपने समय से आगे विचार करता है, उसका निश्चित रूप से या तो उपहास होता है, या विरोध होता है किन्हीं अवस्थाओं में स्वीकृत भी मिलती जिसकी प्रवृत्ति समाज में कम होती है। ऐसे में मनुष्य को दृढ़ व पवित्र होकर भगवान में अपरिमित विश्वास रखते हुए कार्य करना चाहिए, जिससे नकारात्मक प्रवृति स्वतः ही समाप्त हो जाएगी।

उनतालीस वर्ष जीवन का बहुत कम समय होता है, परन्तु इतने कम समय में विश्वविख्यात होकर करोड़ों लोगों को अपना अनुयायी बनाया सच में किसी सामान्य व्यक्ति के बस की बात नहीं है। अपने युवा काल में ही उन्होंने समाज व देश के लिए अनेकों साहित्यिक कृतियां देकर सोचने पर विवश कर दिया है। वर्तमान परिदृश्य में भारतवर्ष जो विश्व का सबसे युवा देश है। आज का युवा जहां एक ओर मानसिक व बौद्धिक रूप से अनेक प्रकार के विकारों से ग्रसित है वहीं दूसरी ओर नशाखोरी, चोरी-चकारी व लूट-घसूट जैसे अनेकों व्यसनों का शिकार होता जा रहा है, ऐसे में स्वामी विवेकानन्द के विचारों की प्रासंगिकता और ज्यादा बढ़ जाती है। उनका यह मत 'शिक्षा का मूल उद्देश्य व्यक्तित्व का निर्माण करना होना चाहिए न की नौकरी धन की प्राप्ति करना' वर्तमान संदर्भ में बिलकुल सटीक बैठता है। आज समाज के पढ़े-लिखे युवा ही सबसे ज्यादा पथभ्रष्ट है।

इसी बात को ध्यान में रखते हुए स्वामी विवेकानंद के जन्म दिवस को 'राष्ट्रीय युवा दिवस' के रूप में पूरे देश में मनाया जाता है। यह दिन युवाओं में निश्चित रूप से नई उर्जा व चेतना से भरता है ऐसा कहने में अतिशयोक्ति न होगी, परन्तु उनके विचारों को केवल और केवल एक दिन तक सीमित न रख कर इसको व्यापक स्तर पर प्रसार करने की जरुरत है तभी यह पहल सार्थक होगी व इसके परिणाम भी सकारात्मक होंगे।

युवाओं को लेकर स्वामीजी का मत है कि युवाओं को अधिक से अधिक संख्या में सामाजिक गतिविधियों में शामिल होना चाहिए, जो न केवल समाज की बेहतरी के लिए बल्कि व्यक्तिगत विकास के लिए भी मार्ग प्रशस्त करने में सहायक सिद्ध होता है।

✍ सतपाल

Scanned with ACE Scanner